पारिभाषिक शब्द

(1) ध्वनि – हम जो कुछ भी सुनते हैं वह ध्वनि है। गायन की आवाज भी ध्वनि है तो बालक के रोने की आवाज भी ध्वनि है, दो ईंटों के टक्कर से जो आवाज निकलती है वह भी ध्वनि है। किंतु संगीत का संबंध केवल उस ध्वनि से है जो मधुर होती है। जिसे हम सुनना चाहते हैं।

अत: वह ध्वनि जो अपने प्रभाव से हृदय को आह्लादित करती है संगीत की भाषा में उसे ही ध्वनि कहते हैं।

इसकी उत्पत्ति कम्पन से होती है, चाहे वह गायन में गले से उत्पन्न ध्वनि हो, सितार में तार के कम्पन से उत्पन्न ध्वनि हो अथवा बांसुरी व शहनाई से हवा के कम्पन से उत्पन्न ध्वनि हो।

(2) नाद – संगीतोपयोगी मधुर ध्वनि को 'नाद' कहते हैं। ऐसी ध्वनि निर्धारित कम्पन संख्याओं पर आधारित होती है, नाद मुख्य दो प्रकार के माने गये हैं :-

(1) आहत नाद

(2) अनाहत नाद

(1) आहत नाद वह है जो दो वस्तुओं की टकराहट या घर्षण से उत्पन्न होता है, इस आहत नाद के अन्तर्गत ही सम्पूर्ण संसार का गायन वादन होता है।

(2) अनाहत नाद वह है जिसे इस स्थूल कानों से नहीं सुन सकते हैं बल्कि यह आहत नाद का ही सूक्ष्म अवस्था है।

नाद की तीन विशेषताएँ होती है :-

(i) नाद का छोटा-बड़ा होना।

(ii) नाद की ऊँचाई अथवा नीचाई

(iii) नाद की जाति अथवा गुण

(i) नाद का छोटा अथवा बड़ा होना - जब हम संगीतोपयोगी ध्वनि अथवा नाद को धीरे से उत्पन्न अथवा उच्चारण करते हैं, तो धीरे से उत्पन्न की गई ध्वनि को जो कम दूरी तक सुनाई देता है उसे 'छोटा नाद' और जो ध्वनि जोर से उत्पन्न की गई हो और अधिक दूरी तक सुनाई दे उसे 'बड़ा नाद' कहते हैं।

(ii) नाद की ऊँचाई-नीचाई - गाने बजाने के समय हम ध्वनि या स्वर को ज्यों-ज्यों ऊँचा ले जाते हैं त्यों-त्यों प्रति सेकेण्ड में होनेवाली आन्दोलन की संख्या बढ़ती जाती है, जब ध्वनि या स्वर को नीचे लाते हैं तो आन्दोलन संख्या घटती जाती है।

आन्दोलन संख्या के इसी बढ़ने या घटने को नाद की ऊँचाई नीचाई कहते हैं।

(iii) नाद की जाति अथवा गुण – वैज्ञानिको के अनुसार कोई भी नाद अकेला उत्पन्न नही होता उसके साथ-साथ कुछ अन्य नाद भी उत्पन्न होते हैं जिन्हे सहायक नाद भी कहते है।

सहायक नादों की संख्या तथा उनकी जोरदारी प्रत्येक वाद्य में भिन्न-2 होती है इसी लिए वायलिन का स्वर सितार से सितार का सारंगी से, सारंगी का तबले से तथा हारमोन्यिम का स्वर सरोद के स्वरों से भिन्न होता है। हम इसे सुन कर ही पहचान लेते हैं कि यह अमुक वाद्य यंत्र की आवाज है। इसे ही नाद की जाति अथवा गुण कहते है।

थाट

सप्तक के स्वरों तथा पाँच उप-स्वरों के विभिन्न मेल को थाट कहते हैं। थाट को मेल भी कहा जाता है। 'अभिनव राग मंजरी' के अनुसार स्वरों के उस समूह को मेल या थाट कहते हैं जिसे राग उत्पन्न करने की शक्ति हो।

थाट के नियम – थाट के निम्नांकित महत्त्वपूर्ण नियम हैं।

1. थाट में हमेशा सात स्वर होना आवश्यैक है। ये सातों स्वर क्रमानुसार होने चाहिए, जैसे-सा, रे, ग, म, प, ध, नि।
2. थाट के लिए आरोह तथा अवरोह की आवश्यकता नहीं होती केवल आरोह से ही थाट की पहचान हो जाती है।
3. थाट गाया-बजाया नहीं जाता। अत: उसमें वादी-संवादी, पकड़ आलाप एवं तान आदि की आवश्यकता नहीं होती।
4. थाट में रंजकता नहीं होती। क्योंकि यह सिद्धान्त मात्र है।
5. थाट में राग उत्पन्न करने की क्षमता होनी चाहिए।
6. उत्तर भारतीय संगीत पद्धति में 10 थाटों का निरूपण किया गया है। जिनके नाम और स्वरूप निम्नांकित हैं–

	थाटों के नाम		स्वरूप
1.	विलावल	–	सा, रे, ग, म, प, ध, नि।
2.	कल्याण	–	सा, रे, ग, मे, प, ध, नि।

3.	खमाज	–	सा, रे, ग, म, प, ध नि।
4.	मारवा	–	सा, रे, ग, मे, प, ध, नि।
5.	काफी	–	सा, रे, ग, म, प, ध, नि।
6.	भैरव	–	सा, रे, ग, म, प, ध, नि।
7.	पूर्वी	–	सा, रे, ग, मे, प, ध, नि।
8.	आसावरी	–	सा, रे, ग, म, प, ध, नि।
9.	तोड़ी	–	सा रे ग मे प ध नि।
10.	भैरवी	–	सा रे ग म, प ध नि।

श्रुति – गायन वादन उपयोगी ध्वनि का वह सूक्ष्म भाग श्रुति कहलाता है जिसे सुनकर एक दूसरे से अलग-2 स्पष्ट रूप से पहचाना जा सके।

संगीत के विद्वानों के अनुसार श्रुतियों की संख्या 22 है वस्तुतः संगीत उपयोगी अर्थात नियमित स्थिर तथा मधुर ध्वनि नाद कहलाती है। विद्वानों ने बाईस नादों की परिभाषा दी है इन्हीं बाईस नादों को संगीत में श्रुति कहते हैं।

शास्त्रकारों ने ठीक ही कहा है–

''श्रूयते इति श्रुति''

अर्थात श्रुति वह है जिसे हम सुन सकते हैं, सुनने का तात्पर्य केवल सुनना हीं नही वल्कि सुन कर समझ लेना ही है।

स्वर – संगीत शास्त्रकारों ने स्वर की उत्पत्ति की व्याख्या अनेक रूपों में की है। बाईस श्रुतियों में से मुख्य बारह श्रुतियों को स्वर कहते है। ये स्वर सप्तक के अन्तर्गत थोड़ी-थोड़ी दूर पर फैले हुए है, इन स्वरों के नाम है–षडज, रिषभ, गंधार, मध्यम, पंचम, धैवत और निषाद।

व्यवहार की सरलता के लिए इन्हें क्रमशः सा, रे, ग, म, प, ध, नि कहा जाता है।

स्वरों के प्रकार – स्वरों के मुख्य दो प्रकार माने जाते है।

(i) शुद्ध अथवा प्राकृतिक स्वर

(ii) विकृत स्वर

शुद्ध स्वर – बारह स्वरों में से सात मुख्य स्वरों को शुद्ध स्वर कहते है।

दूसरे शब्दों में जब स्वर अपने निश्चित स्थान से ऊपर या नीचे नहीं खिसकते तो इन्हें शुद्ध स्वर कहते है, इनकी संख्या सात मानी गई है, जिसके संक्षिप्त नाम है–सा, रे, ग, मे, प, ध, नि।

विकृत स्वर – पांच स्वर ऐसे होते हैं जो शुद्ध तो होते हैं साथ ही साथ विकृत भी होते हैं अर्थात जो स्वर अपने निश्चित स्थान से थोड़ा उतर जाते हैं अथवा चढ़ जाते है वे विकृत कहलाते हैं।

विकृत स्वर भी दो प्रकार के होते है।

(क) कोमल विकृत

(ख) तीव्र विकृत

(क) कोमल विकृत – जब कोई स्वर अपनी शुद्धावस्था अथवा निश्चित स्थान से नीचे आता है तो इसे कोमल विकृत कहते है।

(ख) तीव्र विकृत – जब कोई स्वर अपनी शुद्धावस्था से ऊपर होता है तो उसे तीव्र विकृत कहते हैं। सप्तक षडज और पंचम के अतिरिक्त शेष स्वर रे, ग, ध और नि स्वर कोमल विकृत तथा म तीव्र विकृत होता है। इस प्रकार सात शुद्ध चार कोमल और एक तीव्र स्वर, कुल मिलाकर बारह स्वर होते हैं। इनका क्रम इस प्रकार है–

सा रे॒ रे ग॒ ग म मे प ध॒ ध नि॒ नि।

स्वरों का विभाजन एक और दृष्टिकोण से होता है। इस आधार पर स्वर दो प्रकार के होते हैं।

(i) चल स्वर (ii) अचल स्वर

(i) चल स्वर : जो स्वर शुद्ध होने के साथ-साथ विकृत (कोमल तथा तीव्र) भी होते हैं जैसे रे, ग म, ध, नि चल स्वर कहलाते है, शुद्ध स्वरों के अलावा रे ग ध ओर नि कोमल विकृत और म तीव्र विकृत होता है।

(ii) अचल स्वर : वे स्वर जो सर्वदा शुद्ध होते हैं विकृत कभी भी नहीं होते अचल स्वर कहलाते हैं जैसे–'सा' और प ये दोनों अचल स्वर कहलाते है।

ये न तो कोमल होते हैं और न तो तीव्र ये सदैव शुद्ध रहते हैं।

राग – योऽयँ ध्वनि-विशेषस्तु स्वर वर्ण विभूषितः।

रंजको जन चित्तानां स राग कथितो बुधैः ॥

अर्थात् स्वर और वर्ण से विभूषित जो ध्वनि जन-जन का रंजन करे राग कहते हैं। दूसरे शब्दों में "कम से कम पाँच और अधिक से अधिक सात स्वरों की वह सुन्दर रचना जो कानों को अच्छी लगे राग कहलाती है।

राग को रंजकता प्रदान करने वाला कहा जाता है। राग के दस लक्षण अथवा नियम माने जाते थे। जैसे – ग्रह, अंश, न्यास, अपन्यास, ओड़त्व, षाड़वत्व अल्पत्व, बहुत्व, मंद्र और

तार। इनमें से अधिकतर वर्त्तमान समय में प्रचलित नही हैं। जो लक्षण प्रचलन में है उनमें से मुख्य निम्नलिखित है।

(1) राग को किसी न किसी थाट से उत्पन्न होना चाहिए।

(2) राग में कम से कम पांच स्वर का होना आवश्यक है।

(3) राग में आरोह तथा अवरोह का होना आवश्यक है।

(4) राग में वादी संवादी स्वरों का होना आवश्यक है।

(5) राग में रस या रंजकता का होना आवश्यक है जो श्रोताओं को मुग्ध कर सके।

(6) राग में षडज आधार स्वर है। अतः इसे कभी भी वर्जित नही किया जा सकता है।

(7) प्रत्येक राग में 'म' एवं 'प' में कम से कम से कम एक स्वर अवश्य रहना चाहिए। दोनों स्वर एक साथ वर्जित नहीं होते।

सप्तक

सप्तक – सात स्वरों अर्थात सा, रे, ग, म, प, ध, नि के समूह को सप्तक कहा जाता है। ये सातों स्वर क्रमानुसार होते हैं।

इनमें प्रत्येक स्वर की आंदोलन संख्या पिछले स्वर से अधिक होती है। सप्तक तीन होते हैं– (1) मंद्र सप्तक (2) मध्य सप्तक एवं (3) तार सप्तक।

(1) मंद्र सप्तक – मध्य सप्तक के पहले का सप्तक मंद्र सप्तक कहलाता है। मंद्र सप्तक के प्रत्येक स्वर की आन्दोलन संख्या मध्य सप्तक के उसी स्वर की आंदोलन संख्या की आधी होती है। भातखन्डे स्वर लिपि पद्धति के अन्तर्गत मंद्र सप्तक के स्वरों के नीचे बिन्दु लगाते हैं। जैसे – ध़, नि़ तथा विष्णु दिगम्बर स्वर-लिपि पद्धति के अनुसार स्वरों के ऊपर बिन्दु लगते हैं जैसे–धं, निं।

(2) मध्य सप्तक – साधारण या औसत आवाज वाले सप्तक को मध्य सप्तक कहते हैं। वस्तुतः गायक लोग मध्य सप्तक में ही अधिकतर गाते बजाते हैं। मंद्र सप्तक और तार सप्तक के बीच को मध्य सप्तक कहते हैं। लिपि करने के क्रम में इस सप्तक के स्वरों के नीचे या ऊपर बिन्दु नहीं लगाते हैं।

(3) तार सप्तक – मध्य सप्तक से ऊँचे स्वरों वाले सप्तक को तार सप्तक कहा जाता है। लिपिबद्ध करने के क्रम में स्वरों के ऊपर बिन्दु लगाकर तार सप्तक दर्शाया जाता है। जैसे–गं, मं तथा विष्णु दिगम्बर पद्धति के अनुसार स्वरों के ऊपर खड़ी लकीर लगाई जाती है, जैसे : ग॑, म॑।

वादी स्वर : किसी भी राग में प्रयुक्त होने वाले स्वरों में एक स्वर प्रमुख या प्रधान होता है, जिसे वादी स्वर कहते हैं। इसे अंश स्वर या जीव स्वर कहते हैं। वादी स्वर की प्रमुखता ही किसी भी राग की पहचान का आधार स्तंभ है। बहुत से राग ऐसे हैं जिनके आरोह-अवरोह एक समान हैं परन्तु वादी और संवादी स्वरों के बदल जाने से राग का नाम उसका प्रभाव उसका गायन समय और यहाँ तक कि कभी-कभी थाट भी बदल जाता है।

संवादी स्वर : किसी भी राग में लगने वाले सभी स्वरों में वादी स्वर को छोड़ एक अन्य उप-मुख्य स्वर होता है। यह वादी स्वर का अनुपूरक होता है। किसी भी राग में वादी स्वर से संवादी स्वर की दूरी चार या पाँच स्वरों की होती है। जैसे यदि षड़ज वादी होगा तो संवादी स्वर मध्यम या पंचम होगा। यदि रे वादी होगा तो प या ध संवादी होगा। ग वादी होगा तो ध या नी संवादी होगा। दूसरे शब्दों में वादी-संवादी के अन्तर्गत षड़ज-मध्यम भाव या षड़ज-पंचम भाव होता है।

अनुवादी स्वर : राग में वादी तथा संवादी स्वरों को छोड़कर लगने वाले अन्य सभी स्वर अनुवादी स्वर कहलाते हैं। जैसे-राग भूपाली में 'सा' एवं 'प' स्वर अनुवादी कहे जाएंगे।

विवादी : जिन स्वरों के लगने से राग की शुद्धता नष्ट हो जाए, वैसे स्वर विवादी स्वर कहे जाते हैं। जैसे वृंदावनी सारंग में सा, रे, म, प और दोनों नी को छोड़कर अन्य सभी स्वर (शुद्ध अथवा विकृत) उस राग के विवादी स्वर हैं। विवादी स्वर को राग का शत्रु कहा गया है। किन्तु कभी-कभी राग की सुन्दरता बढ़ाने के लिए विवादी स्वर का क्षणिक प्रयोग भी कर लिया जाता है। किन्तु ऐसा करते समय सावधानी की आवश्यकता होती है, अन्यथा राग के बिगड़ने की आशंका रहती है।

अलंकार : अलंकार का शाब्दिक अर्थ होता है, आभूषण या गहना। किन्तु संगीत शास्त्र में स्वरों की वह क्रमबद्ध शृंखला जिसे लगाने पर राग की सुन्दरता बढ़े उसे अलंकार या पलटा कहते हैं। अलंकार तीन वर्णों अर्थात स्थायी, आरोही तथा अवरोही वर्णों पर आधारित रहता है। जैसे-

(क) आरोह : सारेग, रेगम, गमप, मपध, पधनि, धनिसां।

अवरोह : सांनीध, निधप, धपम, पमग, मगरे, गरेसा।

(ख) आरोह : सारेसारेग, रेगरेगम, गमगमप, मपमपध, पधपधनि धनिधनिसां

अवरोह : सानि सांनिध, निधनिधप, धपधपम, पमपमग, मगमगरे, गरेगरेसा।

आलाप : शास्त्रीय गायन के प्रारंभ में विलंबित लय में राग के स्वरों के विस्तार को आलाप कहते हैं। गायक कलाकार या वादक कलाकार आलाप के माध्यम से ही राग

के रूप को प्रदर्शित करता है। इसके अन्तर्गत वह मींड़, गमक, खट्का, मुर्की आदि का भी प्रयोग करता है। वर्त्तमान गायन शैली में आलाप की दो विधियाँ प्रचलित हैं–

(1) नोम-तोम का आलाप : इसका प्रयोग अधिकांशतः ध्रुपद या धमार गायकी में किया जाता है। जिसे-स्थायी, अंतरा, संचारी और आभोग, चार भागों में बांटा गया है।

(2) आकार का आलाप : इस प्रकार का आलाप, ख्याल, टप्पा, ठुमरी और सुगम संगीत में किया जाता है। आलाप अनिबद्ध गायन के अन्तर्गत आता है, परन्तु गायन के क्रम में आलाप का प्रयोग राग की सुंदरता को बढ़ाता है।

तान : द्रुत गति से राग के स्वरों का विस्तार करने को तान कहते हैं। तान और आलाप में गति का अंतर होता है। तान के कई प्रकार हैं–जैसे : सपाट तान, वक्र तान, कूट तान खटके की तान, अलंकृत तान, गमक की तान, जबड़े की तान, फिरत की तान, मिश्रतान इत्यादि। तंत्र वाद्यों पर तान बजाने को तोड़ा कहते हैं।

ख्याल : ख्याल, फारसी भाषा का शब्द है, जिसका अर्थ है कल्पना। गायन में गायक की कल्पना को महत्त्व दिए जाने के कारण ही विद्वानों ने इसे ख्याल की संज्ञा दी है। इसमें स्वरों की सजावट पर विशेष ध्यान दिया जाता है। गीत का वह प्रकार जिसमें आलाप, तान, खटका, कण आदि विभिन्न अलंकारों द्वारा किसी राग में उसके नियमों का पालन करते हुए भाव अभिव्यक्त करते हैं, ख्याल कहलाता है। ख्याल में गले की तैयारी पर विशेष बल दिया जाता है। ख्याल में ध्रुपद के समान लयकारी पर जोर न देकर स्वर-सौन्दर्य पर विशेष बल दिया जाता है। गायकी की इस शैली को 14वीं सदी में अमीर खुसरो ने जन्म दिया जो अलाउद्दीन खिलजी के दरबार में उच्च कोटि के संगीतकार एवं साहित्यकार माने जाते थे। ख्याल के दो प्रकार होते हैं–

(1) विलंबित ख्याल : इसे बड़ा ख्याल भी कहते हैं। चूँकि यह विलम्बित लय में गाया जाता है इसलिए इसे विलम्बित ख्याल कहते हैं। मत-मतान्तरों के पश्चात निष्कर्ष के रूप में यही बात सामने आती है कि जौनपुर के सुल्तान 'हुसेन शर्की' ने पंद्रहवीं शताब्दी में बड़े ख्याल का आविष्कार किया। बड़े ख्याल के गायन में तबले का प्रयोग किया जाता है। बड़े ख्याल के साथ तिलवाड़ा, झूमटा, एकताल, झपताल, आड़ाचारतालरूपक आदि ताल बजाए जाते हैं। बड़े ख्याल के आलाप में मुर्की, खटका, मींड़, कण आदि का प्रयोग करते हैं। आलाप में बोल आलाप, बहलावा, सरगम तान, बोल बनाव इत्यादि का प्रयोग करते हैं।

ख्याल में शब्द कम होते हैं। इसमें दो भाग स्थायी एवं अंतरा होते हैं। इसका मुखड़ा दो से पाँच मात्राओं तक का होता है।

द्रुत ख्याल : द्रुत गति से गाया जाने वाला ख्याल ही द्रुत ख्याल कहलाता है। इसे 'छोटा ख्याल' के नाम भी संबोधित करते हैं। इसमें भी केवल स्थायी और अंतरा होते हैं। इसमें भी तबले का प्रयोग होता है, तथा एकताल, तीनताल, झपताल, रूपक इत्यादि तालों का अधिक प्रयोग किया जाता है। बड़े और छोटे ख्याल में केवल प्रकृति और लय का अन्तर है। इसमें भी खटका, मुर्की, गमक, मीड़, कण, बहलावा इत्यादि का प्रयोग किया जाता है। क़व्वाली के आधार पर चौदहवीं शताब्दी में अमीर खुसरो ने इस गायकी की रचना की थी। मध्य काल में जो स्थान ध्रुपद को प्राप्त था। वही स्थान आज छोटा ख्याल को भी प्राप्त है। मालकौंस का 'कोयलिया बोले अमवा की डार' तथा बागेश्वरी राग का 'कवन करत तोरी विनती कन्हैया' प्रचलित द्रुत ख्याल हैं।

सरगम : सा, रे, ग, म आदि का ही संक्षिप्त रूप सरगम कहलाता है। अभिव्यक्ति के लिए जिसे व्यापक रूप में प्रयोग करते हैं।

स्थायी : गायन में गीत तथा वादन में गत की रचना के प्रथम चरण या प्रथम भाग को स्थायी कहा जाता है। इसका प्रसार अधिकतर मंद्र तथा मध्य सप्तकों में होता है।

अंतरा : गीत या गत के दूसरे चरण या भाग को अंतरा कहते है। इसका प्रसार मध्य तथा तार सप्तकों में रहता है।

लय : हमारे दैनिक व्यवहार भी कोई ना कोई लय अवश्य रहती है, जैसे-चलने, बोलने दौड़ने, पढ़ने में इत्यादि। व्यापक अर्थ में समय की किसी भी गति को लय कहते हैं। इसकी आवश्यकता संगीत में भी होती है। परन्तु संगीत में 'समय की समान गति या चाल को' लय कहा जाता है। संगीत में लय का संकुचित अर्थ लिया गया है।

लय के प्रकार : लय के तीन प्रकार होते हैं –

(1) 'विलंबित लय' – गायन, वादन या नृत्य में धीमी गति बरतने को विलंबित लय, (2) सामान्य गति बरतने को मध्य लय तथा (3) तीव्र गति बरतने को द्रुत लय कहते हैं।

मात्रा : संमय के माप की इकाई मात्रा कहलाती है। संगीत में समय मापने को 'मात्रा' कहते हैं, जिससे विभिन्न तालों का निर्माण होता है। दो तालियों के बीच का समय एक मात्रा कहलाता है। मात्रा की लम्बाई-छोटाई के आधार पर लय के प्रकार बने हैं।

ठेका : प्रत्येक ताल के कुछ निश्चित बोल होते हैं अथवा हम यह कह सकते हैं कि तबला, पखाबज आदि वाद्यों पर किसी ताल की एक आवृति बजाने को ठेका कहते हैं। उदाहरण स्वरूप 'धागे न तिनक धिन' कहरवा और 'धा धी ना धा तू नां' दादरा ताल का ठेका है।

सम – जिस मात्रा से कोई काम प्रारंभ होता है उस प्रथम मात्रा को सम कहते हैं। क्योंकि गायन, वादन और नृत्य में सम पर जोर पड़ता है और इसी स्थान से ताल का ठेका प्रारंभ होता है। किसी भी ताल के सम को लिपिबद्ध तरीके से (X) चिह्न द्वारा दिखाया जाता है जो भातखण्डे पद्धति का है एवं विष्णु-दिगम्बर पद्धति में (1) चिह्न से दर्शाते हैं।

ताली – सम के अतिरिक्त ताल के अन्य विभागों की प्रथम मात्रा पर, जहाँ हाथ से आघात कर ध्वनि उतपन्न करते हैं, उसे 'ताली' या 'भरी' भी कहते हैं। ताली को संख्या अंक यथा 2, 3 द्वारा दर्शाते हैं।

खाली – ताल को जिस विभाग की प्रथम मात्रा पर जहाँ ध्वनि न करके केवल हाथ हिला दिया जाता है उसे खाली कहते हैं। अधिकतर खाली ताल के बीच की मात्रा अथवा उसके आस-पास पद्धति है। उदाहरणार्थ तीन ताल में खाली नौंवी मात्रा पर मानी जाती है।

विभाग – प्रत्येक ताल अथवा तालबद्ध रचनाओं को कुछ छोटे-छोटे टुकड़ों या विभागों में विभाजित कर दिया गया है, जिन्हे विभाग कहते हैं। हरेक ताल के विभागों की संख्या निश्चित होती है जो ताल के ठेके से स्वभाविक रूप से मेल खाती हुई होती है। उदाहरण स्वरूप ताल दादरा धा धी ना। धा तू ना में एक विभाजक रेखा है जो पूरे ताल को दो भागों में बाँटती है तथा प्रथम मात्रा पर ताली एवं चौथी मात्रा पर दिखाती है।

आरोह – संगीत में 'स्वरों के चढ़ते अथवा ऊपर की ओर बढ़ते हुए क्रम को 'आरोह' कहते हैं। जैसे–सा, रे, ग, म, प, ध, नी, सां। आरोह राग के चलन के अनुसार भी होते हैं।

अवरोह – स्वरों के आरोह के विपरीत नीचे की तरफ उतरते क्रम को 'अवरोह' कहते हैं। जैसे–सां, नि, ध, प, म, ग, रे, सा।

1. प्रश्न : ध्वनि एवं नाद में क्या अंतर है ?
2. प्रश्न : थाट किसे कहते है ? थाट के प्रकार लिखें।
3. प्रश्न : श्रुति एवं स्वर में क्या अंतर है ?
4. प्रश्न : सप्तक किसे कहते हैं ? इसके कितने भेद हैं, लिखें।
5. प्रश्न : वादी और संवादी में क्या अंतर है ?
6. प्रश्न : अलंकार को परिभाषित करते हुए किन्हीं दो अलंकार का उल्लेख करें।
7. प्रश्न : लय किसे कहते हैं ? इसके विभिन्न प्रकारों का उल्लेख करें।

◆◆◆